पंचायतीराज व्यवस्था: विकेन्द्रीकरण की नई पहल

राजेन्द्र प्रसाद यादव
रीडर,
समाजशास्त्र विभाग,
राजकीय महिला महाविद्यालय,
ढिंढुई, पट्टी, प्रतापगढ़

प्रज्ञा सिन्हा
प्रवक्ता,
समाजशास्त्र,
ऊँ बूढ़ेश्वर आर0 एस0 वी0
एस0 पी0जी0 कालेज,
तिना चितरी, प्रतापगढ़

सारांश

भारत की प्राचीन सामाजिक व्यवस्था का आधार पंचायत रही है तो आधुनिक भारतीय लोकतंत्र का भविष्य भी पंचायतराज है। इसलिए ग्रामीण समाज में पंचायतराज व्यवस्था भारतीय समाज के लिए न केवल राजनीतिक और आर्थिक संरचना का मंच है बल्कि विकेन्द्रित विकास की समाज व्यवस्था का यह ताना–बाना भी है। इसलिए हमने पंचायतीराज को न केवल भारतीय संविधान में प्रारम्भ से ही धारा 40 के अन्तर्गत स्थान दिया बल्कि 73वें संविधान संशोधन के द्वारा उसे और मजबूती प्रदान की किन्तु अभी भी हमारी पंचायतराज व्यवस्था इतनी प्रभावी है कि ग्रामसभा का कोरम भी पूरा नही हो पाता। इसलिए पंचायतराज व्यवस्था अपने प्रबन्धन–यथार्थ को लेकर चिंतनीय है।

मुख्य शब्द : पंचायतीराज व्यवस्था, जन सहभागिता, लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण।

प्रस्तावना

भारत की आधारभूत बसावट गाँव–केन्द्रित है। गाँवों की भौगोलिक, सामाजिक, आर्थिक स्थिति को ध्यान में रखकर ही एक राजनीतिक व्यवस्था गठित करने का निश्चय किया गया जिसको 'पंचायतराज' नाम दिया गया। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद संविधान में यह प्रावधान किया गया कि– राज्य ग्राम–पंचायतों के निर्माण के लिए कदम उठाएगा और उन्हें उतनी शक्ति और अधिकार प्रदान करेगा जिससे कि वे (ग्राम पंचायतें) स्वशासन की इकाई के रूप में कार्य कर सकें। हमारी लोकतांत्रिक व्यवस्था में जिस विकेन्द्रीकरण का विचार रखा गया है। उसमें भी ठेंठ गाँव के स्तर पर जनता का शासन स्वयं जनता द्वारा चलाए जाने की कल्पना है। इसी के फलस्वरूप देश में ग्राम स्तर पर पंचायतें गठित करने का प्रावधान किया गया। वस्तुतः पंचायतें हमारे राजनीतिक–आर्थिक जीवन की बल्कि सामाजिक संरचना की रीढ़ हैं जिन पर हमारे समग्र विकास का ढाँचा विकसित करना है।

ग्राम स्तर पर प्रशासनिक इकाई का अस्तित्व भारत में प्राचीन काल से रहा है किन्तु भारत में ब्रिटिश शासन की स्थापना के पश्चात पंचायतें धीरे–धीरे समाप्त होने लगीं। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद पंचायतीराज पर पुनः ध्यान दिय गया तथा संविधान के अनुच्छेद 40 में यह प्रावधान रखा गया कि ''राज्य ग्राम–पंचायतों के निर्माण के लिए कदम उठाएगा और उन्हें उतनी शक्ति और अधिकार प्रदान करेगा जिससे कि वे (ग्राम पंचायतें) स्वशासन की इकाई के रूप में कार्य कर सकें।'' 1952 में सामुदायिक विकास कार्यक्रम और उसके बाद पंचायतीराज की शुरुआत हुई। 1958 में बलवंतराय मेहता समिति ने पंचायतीराज की स्थापना के लिए कुछ मूलभूत सिद्धान्त निर्धारित किए जिसमें ग्राम स्तर पर 'ग्राम पंचायत', खण्ड स्तर पर 'पंचायत समिति' और जिला स्तर पर 'जिला परिषद' गठित करने का सुझाव दिया। सबसे पहले राजस्थान और आंध्रप्रदेश ने इस योजना को अंगीकार किया। अब मेघालय और नागालैंड को छोड़कर शेष सभी राज्यों में पंचायतराज लागू है। वर्तमान में देश में लगभग 2,20,000 ग्राम पंचायतें, 5,500 पंचायत समितियाँ और 450 जिला परिषदें हैं। वस्तुतः भारत में पंचायतराज भारतीय लोकतंत्र की अपरिहार्य घटना है जो पं0 जवाहर लाल नेहरू के शब्दों में ''भारत के संदर्भ में बहुत–कुछ मौलिक और क्रान्तिकारी है।

उद्देश्य

1. पंचायती राज व्यवस्था का विश्लेषण।
2. पंचायती राज व्यवस्था में जन सहभागिता का विश्लेषण।
3. पंचायती राज व्यवस्था के द्वारा महिलाओं में राजनीतिक जागृति का विश्लेषण।
4. ग्रामीण सामाजिक संरचना पर पंचायती राज व्यवस्था के प्रभाव का विश्लेषण।
5. पंचायती राज व्यवस्था की असफलता का विश्लेषण।
6. पंचायतीराज व्यवस्था द्वारा सामाजिक परिवर्तन का विश्लेषण।

पंचायतीराज व्यवस्था से आम जनता में शासन के प्रति रुचि जाग्रत होती है, शासकीय शक्तियो एवं कार्यों का ग्राम स्तर तक विकेन्द्रीकरण होता है। आम जनता को राजनीतिक अधिकारों के लिए शिक्षित करती है, जनता एवं शासन के बीच की दूरी कम करती है, राजनीति की अन्य संस्थाओं– विधानसभा एवं लोकसभा के लिए जन–प्रतिनिधियों को अनुभव प्रदान करती है। इस प्रकार पंचायतीराज व्यवस्था लोकतांत्रिक व्यवस्था को विकसित एवं मजबूत करने की सहज, स्वाभाविक प्रक्रिया है। दरअसल यह लोकतंत्र की पहली और आधारभूत राजनीतिक पाठशाला है।

यद्यपि पंचायतीराज की उक्त व्यवस्था 1952 से 1993 तक कार्य करती रही किन्तु व्यवहार में पंचायतों को वास्तविक विकेन्द्रित स्वरूप प्राप्त नहीं हो पाया, विकास एवं प्रशासन में जन–सहभागिता नहीं उभर सकी। इसलिए 25 अप्रैल, 1993 से 73वाँ संविधान संशोधन अधिनियम लागू किया गया जिसमें यह निर्धारित किया गया कि ग्रामसभा ग्रामस्तर पर ऐसी शक्तियों का प्रयोग करेगी और ऐसे कार्य करेगी जो राज्य का विधान मण्डल विधि बनाकर उपबंध करेगा; 20 लाख की जनसंख्या से अधिक के सभी राज्यों में ग्राम, खण्ड एवं जिला स्तर पर पंचायतराज संस्थाओं का गठन किया जायेगा; प्रत्येक पंचायत क्षेत्र की जनसंख्या के अनुपात में अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों के लिए स्थान आरक्षित रहेंगे; आरक्षित स्थानों में एक–तिहाई स्थान स्त्रियों के लिए रहंगे; पंचायतों का कार्यकाल 5 वर्ष का होगा; किसी कारण से पंचायत भंग की गयी तो छह माह में चुनाव कराना अनिवार्य होगा; पंचायतों की वित्तीय स्थिति का निरीक्षण करने हेतु वित्त आयोग का गठन किया जायेगा जो पंचायतों के वित्तीय संसाधनों पर सुझाव देगां अब पंचायतों के कार्य कृषि विस्तार, भूमि सुधार, जल प्रबन्ध, पेयजल, लघु उत्पादन, ईंधन व चारा, पुस्तकालय, समाज कल्याण कार्यक्रम, शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार आदि की सुविधाएँ जुटाता है।

भारतीय संविधान में पंचायतों के अधिकारों, दायित्वों और वित्तीय साधनों के प्रावधानों से अब राज्य सरकारों द्वारा इनका स्थगन नहीं किया जा सकेगा। पंचायत राज व्यवस्था ने यद्यपि देश की सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक व्यवस्थाओं में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। और देश को प्रशासनिक विकेन्द्रीकरण की ओर अग्रसर किया है, पश्चिमी बंगाल एवं कर्नाटक सरकारों ने पंचायत राज को मजबूत बनाने में राजनीतिक इच्छाशक्ति का उदाहरण प्रस्तुत किया है किन्तु फिर भी ग्रामीण जनता द्वारा इन संस्थाओं का सकारात्मक उपयोग बहुत कम किया गया और ये राजनीतिक दलबंदी का या निष्क्रिय मंचों का ढाँचा बनकर रह गई। इसीलिए 73वें संविधान संशोधन द्वारा पंचायतों में सहभागिता बढ़ाने का प्रयास किया गया। अब पंचायतों को स्थानीय स्तर पर न केवल ग्राम के समग्र विकास के प्रति उत्तरदायी और स्वतंत्र किया गया है, बल्कि समाज के वंचित वर्ग की अधिक सहभागिता अर्जित कर सहभागी लोकतंत्र की आधारभूत प्रक्रिया को वास्तविक रूप में संचालित करने का प्रयास किया जा रहा है किन्तु जब तक पंचायतों को राज्य के रहम पर जीने वाली औपचारिक इकाइयों के बजाय उन्हें स्वायत्तशासी स्थानीय सरकार का रूप नहीं दिया जाता तब तक आधारभूत परिवर्तन नहीं होगा।

ग्रामसभाओं में सभी ग्रामवासियों, विशेष रूप से महिलाओं को भागीदार बनाने के लिए ग्रामसभाएँ पंचायत स्तर के स्थान पर ग्राम एवं वार्ड स्तर पर आयोजित करने तथा ग्रामसभा के सुझावों को ग्राम पंचायत द्वारा वजन देने के लिए संवैधानिक प्रावधान किए जाएँ। इसी तरह ग्राम पंचायत के कार्य–क्षेत्र का संविधान की ग्यारहवीं सूची में स्पष्ट उल्लेख किया जाए, पंचायत सर्विस काडर की स्थापना हो तथा पंचायतों की कार्य–प्रणाली सम्बन्धी विवादों के निबटारे के लिए न्यायिक ट्रिब्यूनल की स्थापना की जाए। ग्राम पंचायतों का वित्तीय आधार मजबूत करने के लिए केन्द्र सरकार ने 1999–2000 के बजट में मैचिंग ग्रान्ट देने की घोषणा की है किन्तु उचित यह हो कि देश की पूरी आबादी की व्यक्तिगत आय तथा उस क्षेत्र विशेष की प्रति व्यक्ति की आय के अन्तर को सरकारी अनुदान के रूप में दिया जाए ताकि पिछड़े क्षेत्र की पंचायतों को अधिक अनुदान प्राप्त हो सके। पश्चिम बंगाल की तरह राज्य सरकार अपनी आय का एक निश्चित हिस्सा (पश्चिम बंगाल में 8वाँ हिस्सा तय किया है) पंचायत राज को दे तथा आय के कुछ स्रोतों की वसूली पंचायतों को ही सौंपें।

यदि पंचायतों की वित्तीय स्थिति को सुधारा जाए, पंचायतों के निर्वाचित प्रतिनिधियों, विशेष रूप से महिला प्रतिनिधियों को सघन प्रशिक्षण दिया जाए, पंचायतों के चुनावों में मतदान को अनिवार्य किया जाए तथा अधिकारियों द्वारा पंचायतों का उपयुक्त पथ–प्रदर्शन किया जाए तो पंचायतीराज संस्था में आधारभूत रूप से परिवर्तन हो सकता है। पंचायतीराज व्यवस्था में व्याप्त बुराइयों को दूर करने के लिए वार्ड स्तर पर ही जनसमितियाँ बनाकर जनसहभागिता को बढ़ाना, जनता को जागरूक करना परम आवश्यक है। पंचायतीराज की कार्य प्रक्रिया करने के लिए जनता को सूचना का अधिकार दिया जाना चाहिए, उसके लिए जागरूकता भी पैदा करनी चाहिए। यदि जनसहभागिता के स्वरूप को विशेष रूप से वंचित वर्ग एवं महिलाओं की सहभागिता प्राप्त करने का ठोस प्रयास नहीं किया गया तो पंचायतीराज व्यवस्था के लिए जिस आर्थिक स्वतंत्रता एवं साधन–सम्पन्नता की कल्पना की गयी है वह गाँव के चंद प्रभावी लोगों के आधिपत्य एवं अन्य लोगों के शोषण का जरिया बनकर रह जायेगी। पंचायतीराज व्यवस्था में दी गयी शक्तियों का वास्तविक विकेन्द्रीकरण आवश्यक शर्त है और इसके लिए जन–जागरण आवश्यक प्रक्रिया है। नागरिक अधिकार पत्रों एवं सूचना के अधिकार के प्रति जागरूकता बढ़ाकर जन–जागरूकता को सघन किया जा सकता है। यह जन–जागरण स्थानीय स्तर के जागरूक व्यक्तियों एवं संस्थाओं के सक्रिय तथा सतत् सहयोग से ही संभव है। यदि यह संभव होता है तो भारतीय समाज में क्रान्तिकारी परिवर्तन की संभावना है तथा भारतीय लोकतंत्र की प्रभाविता के नए अध्याय की शुरुआत है।

73वाँ संविधान संशोधन कितना दंतहीन है, इसे वर्तमान में सभी राजनीतिक दल महसूस कर रहे हैं। अगर पंचायतों के पास वित्तीय और प्रशासनिक अधिकार नही हैं तो फिर चुने हुए पंचायतीराज के प्रतिनिधि करेंगे ही क्या?

इसीलिए अप्रैल, 2002 को केन्द्र द्वारा पंचायत मंत्रियों का सम्मेलन बुलाया जिससे सम्बन्धित 15 सूत्रीय कार्यक्रम प्रस्तुत किया गया तथा 87वाँ संविधान संशोधन बिल भी इस निमित्त संसद में प्रस्तुत किया गया किन्तु कुछ मुख्यमंत्रियों के गतिरोध के चलते वह पारित नहीं करवाया गया। राजस्थान में अगस्त, 2002 में विधानसभा का विशेष सत्र भी चला किन्तु विधायकों के हित टकराने के कारण ठोस निर्णय कुछ नहीं हो सके। हालाँकि राजस्थान सरकार पंचायतीराज संस्थाओं को संविधान की 11वीं अनुसूची में उल्लिखित 29 विषय मय बजट, कार्य व कर्मचारियों को सौंपने हैं जिनमें से 19 तो सौंपे भी जा चुके हैं। पंचायतराज के इस व्यापक परिवर्तन को लेकर अन्य विभागों के अधिकारियों एवं कर्मचारियों एवं विशेष रूप से विधायकों में असंतोष है किन्तु पंचायतीराज की अवधारणा व प्रक्रिया इतनी आगे बढ़ चुकी है कि यह विरोध अब अप्रासंगिक होता जा रहा है। यदि केन्द्र सरकार पंचायतराज व्यवस्था से सम्बन्धित अवधारणा को आम जन तक ले जाती है तो हम स्थानीय सरकार (जिला सरकार) की प्रक्रिया में और आगे बढ़ेंगे।

निष्कर्ष

73वें संविधान संशोधन के बावजूद पंचायतीराज के प्रभावी न हो सकने तथा देश में वास्तविक विकेन्द्रित प्रशासन स्थापित करने के उद्देश्य से पंचायतराज को केन्द्र एवं राज्य की तरह जिला स्तर पर शासन के एक 'तीसरे' स्तर के रूप में मान्यता देने का विचार सामने आ रहा है। मध्य प्रदेश एवं राजस्थान में इस दिशा में प्रयत्न शुरू हो चुके हैं। अब प्रादेशिक सरकारों के सामने 'जिला सरकार' की अवधारणा भी सामने आने लगी है ताकि आर्थिक एवं प्रशासनिक दृष्टि से पंचायतीराज का वास्तविक महत्व स्थापित हो। अतः आगामी दो दशकों में प्रशासनिक व्यवस्था के विकेन्द्रीकरण तथा पंचायतीराज में जन–सहभागिता के सक्रिय होने सं पंचायतीराज व्यवस्था अपनी नई जड़ों का प्रसार करेगी तथा उसमें लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण की नई कोपलों, नए पुष्पों, नए पराग का उन्मेष होगा। यद्यपि पंचायतीराज को ही स्वशासन का रूप दे देने से सांसदों एवं विधायकों का कार्यपालिका में दखल सीमित हो जने से वे इसका विरोध कर रहे हैं किन्तु प्रशासन व्यवस्था का अन्ततः सहभागिता आधारित विकेन्द्रीकरण करना ही होगा। वस्तुतः पंचायतराज जब अपने–अपने क्षेत्र में योजना बनाने और उनका क्रियान्वयन के पूर्ण अधिकार प्राप्त करेगा तो इन संस्थाओं को चुनाव हेतु इसी आधार पर लोगों के सामने जाना होगा तो ग्राम सभाएँ स्वतः क्रियान्वित होंगी तथा ग्राम स्वराज अपने सही अर्थ में मूर्तमान होगा और लोकतंत्र के विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया आगे बढ़ेगी। वस्तुतः पंचायतीराज व्यवस्था का सुदृढीकरण ही भारतीय राजनीति एवं अर्थव्यवस्था का ही नहीं बल्कि भारत की सामंती सामाजिक संरचना एवं जीवन–शैली का लोकतांत्रीकरण है। अन्ना हजारे एवं उनकी टीम ने पंचायत व्यवस्था को मजबूत बनाने, निर्णय लेने एवं कानून बनाने के अधिक अधिकार सौंपने तथा जनसहभागिता को बढ़ाकर ग्रामसभाओं को अधिक चैतन्य करने का संकल्प व्यक्त किया है। यदि यह संकल्प क्रियान्वित हो जाता है तो पंचायतराज व्यवस्था में क्रान्तिकारी परिवर्तन आएगा और यह संभावित है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. कौशिक, सुशीला :वुमन इन पंचायती राज (हर आनन्द पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली 1991)
2. कौशिक, सुशीला : वाईस ऑफ वुमन इन पंचायती राज (फैन्डरिज इबर्ट स्टीफिंग, नई दिल्ली, 2005)
3. कटारिया, सुरेन्द्र : ग्रामीण विकास एवं पंचायतीराज (आर0बी0एस0ए0 पब्लिशर्स,जयपुर, वर्ष 2003)
4. कटारिया, सुरेन्द्र : ग्रामीण विकास एवं पंचायतीराज (आर0 बी0 एस0 ए0 पब्लिशर्स, जयपुर, वर्ष 2003)
5. कपूर, प्रमिला : मैरिज एण्ड वर्किंग वुमेन इन इण्डिया (विकास पब्लिकेषन्स, नई दिल्ली, वर्ष 1970)
6. केर, जे0 : अवर्स बाई राइट : वुमेन्स एज़ ह्यूमन राइटस (जेड बुक्स ,लन्दन 1993)
7. कटारिया, सुरेन्द्र : ग्रामीण विकास व पंचायती राज (आर0 बी0 एस0 पब्लिशर्स, जयपुर, वर्ष 2003)
8. कटारिया, डॉ0 सुरेन्द्र : पंचायतीराज संस्थाएँ अतीत, वर्तमान और भविष्य (नेशनल पब्लिशिंग हाउस, जयपुर, नई दिल्ली, वर्ष 2007)